अध्याय
08

महिलाओं की स्थिति में सुधार

शिक्षण अधिगम प्रक्रियाएँ

- औपनिवेशिक कालीन महिलाओं की स्थिति पर एक परियोजना कार्य तैयार करना ।

सीखने के प्रतिफल

- महिला, विधवा पुनर्विवाह, बाल विवाह एवं सामाजिक सुधार से जुड़े मुद्दों और इन मुद्दों पर औपनिवेशिक प्रशासन के कानूनों और नीतियों का विश्लेषण करते हैं ।
- सामाजिक बुराईयों को दूर करने में अपनी भूमिका के प्रति समझ विकसित हो सकेगी ।

© JCERT not to be republished

नारी समाज की आधरशिला है। मानव सभ्यता के विकास में उसकी सृजनात्मक भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही है। अपने विविध रूपों में नारी, पुरुष को संवर्द्धन, प्रोत्साहन और शक्ति प्रदान करती है। किसी समाज के सांस्कृतिक विकास को समझने के लिए नारी-छवि का विवेचन एक महत्त्वपूर्ण मानदण्ड है।

जहाँ तक इतिहास लेखन का प्रश्न है, इतिहास के फलक पर नारियों की उपस्थिति यत्र-तत्र ही दिखती है। वे हाशिए पर हैं। इतिहास में उनकी सामाजिक भूमिका के प्रति भी उदासीनता दिखाई देती है, किंतु यह एक अनकहा सत्य है कि पूर्ण इतिहास बिना स्त्रियों को सम्मिलित किये संभव नहीं है। इतिहास की प्रत्येक घटना, आंदोलन एवं परिवर्तन में पर्दे के पीछे से स्त्रियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इतिहास में कोई भी धारा हो, कोई भी वाद हो, कोई भी काल हो, स्त्री की भूमिका उस नींव की ईंट की तरह है जो किसी भी संरचना की आधार है।

यद्यपि भारतीय परंपरा के दीर्घकालीन इतिहास में नारी की छवि सदैव एक जैसी नहीं रही और उसमें समयानुरूप उतार-चढ़ाव आते रहे। यह भी सही है कि उनकी मर्यादापूर्ण स्थिति में एक बार जब विकृतियों का क्रम प्रारंभ हुआ तो उसकी गति तीव्र और उसका स्वरूप उत्तरोत्तर वीभत्स होता चला गया । किंतु यह आक्षेप कि भारतीय समाज में स्त्रियों का स्थान निरंतर निम्नतर रहा है । भारतीय संस्कृति और समाज के स्वरूप की अनभिज्ञता ही कहा जा सकता है ।

19वीं शताब्दी तक भारतीय महिलाओं की स्थिति अच्छी नहीं कही जा सकती । इस शताब्दी के आरंभिक काल से ही महिलाओं की निम्नतम दयनीय स्थिति को देखते हुए भारतीय समाज सुधारकों ने महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए प्रयास प्रारंभ कर दिए, जिसका प्रतिफल सकारात्मक रहा ।

प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति

प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों का विशिष्ट स्थान रहा है। समाज में उनका स्थान व सम्मान आदर्शात्मक तथा मर्यादायुक्त था। पुरुषों के समान ही उन्हें समाज में उच्च स्थान प्राप्त था। स्त्री-कन्या के रूप में, पत्नी व माता के रूप में समाज में पूजनीय एवं आदृत थी। उनके प्रति समाज व परिवार के लोगों की काफी निष्ठा व श्रद्धा थी। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में वह न केवल विद्या, शील, ममता, यश और सम्पत्ति की प्रतीक समझी गयीं बल्कि भारतीय धर्मशास्त्र में उन्हें सर्वशक्तिमान भी माना गया है। नारी के बिना पुरुष अपूर्ण व अधूरा समझा गया।

हड़प्पा काल में समाज मातृसत्तात्मक था । वैदिक युग में नारी का जीवन काफी उन्नत व परिष्कृत था। वे समाज एवं परिवार दोनों में अत्यन्त ही पूजनीय व आदरणीय मानी जाती थीं। समाज परिवार में उनका महत्त्व काफी अधिक था। वे अपना आत्मविकास व उत्थान करने के लिए स्वतन्त्र थीं। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों यथा-शिक्षा, धर्म, साहित्य, कला, संस्कृति, नृत्य गायन व वादन में उनका योगदान काफी महत्त्वपूर्ण था। शिक्षा व वेद-वेदान्त ज्ञान के मामले में वह पुरुषों से पीछे नहीं थीं। वेद-वेदान्त की शिक्षा ग्रहण करने की वजह से वे अत्यन्त सुशिक्षित, सुसभ्य व सुसंस्कारित बन गयीं थीं। इस काल में लोपामुद्रा, घोषा, सिकता, अपाला आदि प्रमु विदुषी स्त्रियों का उल्लेख मिलता है । स्त्रियाँ, पुरुषों के कार्यों में हाथ बँटाकर परिवार व समाज की एक स्थायी व गौरवपूर्ण अंग बन गयी थीं। स्त्री व पुरुष दोनों जीवन रूपी यज्ञ के रथ के जुड़े हुए दो अश्व थे। यज्ञ के सुसम्पन्नता में दोनों की भागीदारी समान मानी गयी थी। सामाजिक व धर्मिक उत्सवों एवं पर्व-त्योहारों में वह उन्मुक्त होकर भाग लेती थीं। ऋग्वैदिक काल में जहां स्त्रियों की स्थिति बेहतर होने का उल्लेख मिलता है वहीं उत्तर वैदिक काल तक आते-आते स्त्रियों की दशा अच्छी नहीं रह गई थी । इस समय तक समाज में बहुविवाह, अन्तर्वर्णीय विवाह, दहेज प्रथा आदि का प्रचलन हो गया था। युग के अनुरूप स्त्रियों की स्थिति में उतार-चढ़ाव होते रहें थे ।

कुछ प्राचीन भारतीय ग्रंथों में कन्याओं के जन्म की निंदा किए जाने का भी उल्लेख मिलता है एवं पुत्र को परिवार का रक्षक बताया गया है । गौतम बुद्ध के जन्म के समय तक पुरुषप्रधानता एवं पितृसत्तात्मकता भारतीय समाज के स्तंभ बन चुके थे जिसमें परिवार जैसे एक सामाजिक ढांचे के माध्यम से महिलाओं को नियंत्रित एवं सुरक्षित रखा जाना अति आवश्यक माना जाने लगा था । बहुपत्नी प्रथा, बाल विवाह एवं वेश्यावृत्ति जैसी महिलाओं को निम्नीकृत करनेवाली सामाजिक कुरीतियां भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का अभिन्न अंग बन चुकी थी । बौद्ध साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन परिस्थितियों में महात्मा बुद्ध द्वारा ने स्त्रियों को बौद्ध धर्म में प्रवेश की अनुमति दी थी । उनके द्वारा स्त्रियों को संघ में प्रवेश की अनुमति देना तत्कालीन समय में एक क्रांतिकारी कदम था ।

गुप्तकालीन साहित्य के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि उस काल में नारी की स्थिति का आदर्श रूप दृष्टिगोचर होता है किंतु व्यावहारिक दृष्टि से समाज में उनका स्थान गौण था । वहीं गुप्तोत्तर काल एवं

© JCERT not to be republished

मुस्लिम काल में स्त्रियों की स्थिति संतोषजनक नहीं थी । इस समय तक समाज में व्याप्त सती प्रथा एवं जौहर प्रथा, कन्या शिशु हत्या, बाल विवाह, देवदासी एवं वेश्यावृत्ति जैसी कुप्रथाओं ने स्त्रियों की स्थिति को कमजोर कर दिया था। मध्यकालीन भारत में रजिया सुल्तान दिल्ली के सिंहासन पर बैठने वाली पहली महिला शासिका थी किंतु महिला होने के कारण इन्हें कई प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। महिलाओं की यही स्थिति परवर्ती कालों में भी बनी रही और मुगलों के शासन काल में स्त्रियों की स्थिति और भी खराब होती चली गई। महिलाओं की निरंतर खराब होती हुई स्थिति के कारण इनकी स्थिति में बदलाव एवं सुधार की आवश्यकता महसूस होने लगी और आगे चलकर महिलाओं को स्वतंत्र होकर जीवन जीने, प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने एवं उनकी स्थिति में बदलाव लाने की सुगबुगाहट शुरू होने लगी।

19वीं शताब्दी का सुधार आंदोलन धार्मिक सुधारों के साथ-साथ सामाजिक सुधारों के लिए भी था। भारतीय समाज सुधारकों ने भी महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयास करने प्रारंभ कर दिए । उन्होंने तत्कालीन समाज में व्याप्त रीति-रिवाजों, मूल्यों, मान्यताओं, बाह्य आडंबर तथा संकीर्ण धरणाओं पर प्रश्न चिन्ह लगाया और संचार के नए माध्यमों के विकसित होने के बाद इन मान्यताओं से संबंधित विचार विमर्श और चर्चाओं का स्वरूप भी बदलने लगा । अखबारों, पत्र-पत्रिकाओं, किताबों एवं पर्चों के प्रकाशन से लोगों को अपने विचारों को प्रकट करने का सुअवसर प्राप्त हुआ और अब कई प्रकार के संगठनों और सभाओं के द्वारा भी लोगों के बीच इस प्रकार की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक मुद्दों पर चर्चाएँ होने लगी । पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं को भी इन चर्चाओं में भाग लेने का अवसर प्राप्त होने लगा। इस प्रकार की चर्चाओं से आम लोगों में सामाजिक एवं धर्मिक बदलाव के प्रति जागरूकता आने लगी

जरा सोचिए—

- किताबें, अखबार और पत्र-पत्रिकाएँ और पर्चे आदि छपने की तकनीक जब नहीं थी, उस समय सामाजिक रीति-रिवाजों और व्यवहारों के बारे में किस प्रकार चर्चा चलती होगी ?

© ICERT not to be republished

कन्या शिशु वध

तत्कालीन समय में उत्तर और पश्चिमी भारत में कन्या शिशु हत्या की परंपरा प्रचलित थी । इस क्रूर प्रथा में कन्या शिशु को परिवार पर आर्थिक बोझ मानते हुए शैशव काल में ही उनकी हत्या कर दी जाती थी । कन्या के बड़ी हो जाने पर दहेज के बोझ से डरकर अथवा अन्य कई प्रकार के कारणों से कन्या शिशु को मादक पदार्थ देकर अथवा उन्हें भूखा रखकर उनकी हत्या कर दी जाती थी । महाराजा रणजीत सिंह के पुत्र दिलीप सिंह ने स्वयं इस बात का उल्लेख किया है कि - 'उसने स्वयं अपने नेत्रों के सामने देखा कि उसकी अपनी बहनों को बोरी में बंद करके नदी में फेंक दिया गया।' भारतीय समाज सुधारकों एवं प्रबुद्ध अंग्रेज व्यक्तियों ने इस घृणित प्रथा की कटु आलोचना की और इसे रोकने का बहुत प्रयास किया ।

इन प्रयासों के फलस्वरूप 1795 ई के बंगाल के नियम 21 और 1804 के नियम 3 से कन्या शिशु हत्या को भी साधारण हत्या के बराबर मान लिया गया और भारतीय रियासतों के रेजीडेंट को भी यह निर्देश दिया गया कि वे रियासतों में इस कुप्रथा को बंद करने का प्रयास करें । ब्रिटिश सरकार ने सर्वप्रथम 1870 ई में इसे गैर कानूनी घोषित किया और अन्य कानूनों की अपेक्षा इस कानून का कठोरतापूर्वक पालन किया गया । सरकार की ओर से कन्या शिशु हत्या को जघन्य अपराध मानते हुए इसे समाप्त करने के लिए तत्परता दिखाई गई । यद्यपि बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में इस प्रथा का पालन करने में काफी कमी आई किंतु वर्तमान समय में भी भारतीय समाज में कहीं-कहीं कन्या शिशु हत्या के प्रमाण देखने को मिलते हैं जिस पर पूरी तरह से अंकुश लगाए जाने की आवश्यकता है ।

बाल विवाह

बाल विवाह एक ऐसी सामाजिक कुरीति है जो सदियों से भारत में चली आ रही है । बाल विवाह, बचपन खत्म कर देता है और बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और संरक्षण पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। बाल विवाह का सीधा असर न केवल लड़कियों पर बल्कि उनके परिवार और समुदाय पर भी होता है। भारतीय समाज में बाल विवाह महिलाओं के विकास में सदैव बाधक सिद्ध हुआ है । कम उम्र में ही लड़कियों की शादी कर दी जाती थी । भारतीय महिलाओं के जल्द विधवा होने का एक कारण यह भी था कि कम उम्र में उनका विवाह अधेड़ उम्र के पुरुषों के साथ कर दिया जाता था। यह रिवाज गरीब परिवार में अधिक प्रचलित था, क्योंकि ये दहेज देने में असमर्थ होते थे।

बंगाल में ब्रह्मसमाज तथा महाराष्ट्र में रानाडे और स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा बाल विवाह का विरोध किया गया । अंततः केशव चन्द्र सेन के प्रयासों के कारण 1872 ई में बाल विवाह अधिनियम पारित हुआ और बाल विवाह को गैर कानूनी घोषित किया गया । 1891 ई के एज ऑफ कॉनसेंट ऐक्ट द्वारा लड़कियों के विवाह की उम्र 10 से बढ़ाकर 12 वर्ष कर दी गई ।

आगे चलकर हरविलास शारदा के प्रयासों से सितम्बर, 1929 ई में तत्कालीन ब्रिटिश सरकार की ओर से एक कानून बनाया गया, जिसे 'शारदा कानून' के नाम से जाना गया । 1 अप्रैल 1930 ई से इस कानून को पूरे ब्रिटिश भारत में लागू कर दिया गया । इस कानून के तहत शादी के लिए लड़कियों की न्यूनतम उम्र 14 वर्ष और लड़कों की 18 वर्ष तय की गई थी । इसके पश्चात् 1949, 1978 एवं 2006 ई में इस कानून में संशोधन किए गए । 1978 ई में विवाह की उम्र सीमा को बढ़ाकर लड़कियों के लिए 18 और लड़कों के लिए 21 वर्ष कर दिया गया । वर्तमान समय में 'बाल विवाह निषेध (संशोधन) विधेयक, 2021' के तहत केंद्र सरकार लड़कियों की शादी की न्यूनतम उम्र 21 वर्ष करना चाहती है और इसके लिए लोकसभा में यह विधेयक पेश किया जा चुका है । लेकिन ऐसे तमाम संशोधनों के बावजूद बाल विवाह पर पूरी तरह अंकुश नहीं लगाया जा सका है । यही वजह है कि अब ताजा फैसले के बाद सवाल उठने लगा है कि क्या इससे

© JCERT not to be republished

बाल विवाह जैसी सामाजिक बुराई पर पूरी तरह अंकुश लगाया जा सकेगा ? वास्तव में बाल विवाह जैसी सामाजिक कुप्रथा पर पूरी तरह से अंकुश तभी लगाया जा सकता है जब सरकार के प्रयासों के साथ-साथ देश के सभी नागरिक इसे रोकने के लिए जागरूक हो।

बाल विवाह
• कम उम्र में बच्चों की शादी कर देने से उनके स्वास्थ्य, शारीरिक एवं मानसिक विकास तथा खुशहाल वैवाहिक जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कम उम्र में शादी करने से पूरे समाज में पिछड़ापन आ जाता है। इसलिए हमारे देश के कानून में लड़के तथा लड़कियों के लिए विवाह करने की एक उम्र निर्धारित की गई है। इस निर्धारित उम्र से कम उम्र में शादी करने को ही बाल विवाह कहते हैं।
• बाल विवाह का मुख्य कारण गरीबी, अशिक्षा, पितृसत्तात्मक समाज, लड़कियों की सुरक्षा, दहेज-प्रथा आदि है।
• बाल विवाह अनेक समस्याओं जैसे- गरीबी, कुपोषण, बढ़ती जन्मदर, निरक्षरता, कम जीवन प्रत्याशा एवं शिशु मृत्यु दर को जन्म देता है।
• यूनिसेफ की रिर्पोट के अनुसार विश्व के 40 प्रतिशत बाल विवाह भारत में होते हैं।
• संयुक्त राष्ट्रसंघ की रिर्पोट के अनुसार भारत बाल विवाह के मामले में विश्व में दूसरे स्थान पर है।
• बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम-2006 के अंतर्गत बाल विवाह होने पर 2 वर्ष की सजा एवं 1 लाख रुपये का जुर्माना अथवा दोनों का प्रावधान है।

सती प्रथा

गुप्त एवं गुप्तोत्तर काल के समाप्त होते ही राजपूत काल में कुछ ऐसी प्रथाएँ प्रवर्तित हुई जो जीवन से जुड़ गई । सती प्रथा उनमें से प्रमुख है। भारतीय समाज में सती प्रथा का उद्‌भव यद्यपि प्राचीन काल से ही शुरू हो गया था किंतु इसका विकराल रूप आधुनिक काल में देखने को मिलता है। यह उस पत्नी के लिए प्रयोग किया जाता था जो अपने पति के साथ जन्म जन्मांतर तक साथ रहना चाहती थी और उसके प्रमाण के रूप में उसकी चिता में अपने आप को जला लेती थी । सती प्रथा पर रोक लगाने के लिए मुगल सम्राट अकबर एवं पेशवा ने कई प्रयास किए किंतु उन्हें इस कार्य में पूरी तरह सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। आगे चलकर लॉर्ड कॉर्नवालिस, लॉर्ड मिंटो एवं लॉर्ड हेस्टिंग्स ने भी सती प्रथा पर अंकुश लगाने की कोशिश की।

सती का शाब्दिक अर्थ एक पवित्र साध्वी स्त्री या सदाचारी महिला है।

© JCERT not to be republished

बंगाल में सती प्रथा का बाहुल्य था । इस प्रथा के अनुसार हिंदू विधवा स्त्री अपने मृत पति के शव के साथ चिता में जीवित जला दी जाती थी। संभवत: कुछ नारियाँ अपनी इच्छा से सती होती थी किंतु कुछ नारियां ऐसी भी होती थी जो सामाजिक सम्मान एवं सगे-संबंधियों के दबाव के कारण विवश होकर चिता पर जलती थी। अनेक ऐसी नारियाँ भी थी जो पति की मृत्यु के पश्चात सती नहीं होना चाहती थी किंतु परिवार के सदस्य और अन्य सगे संबंधी उन्हें सती होने के लिए विवश करते थे और सती प्रथा के समर्थक लोग लंबे-लंबे बांस लेकर चिता के चारों ओर खड़े हो जाते थे जिससे सती होने वाली नारी जलती चिता से भागने नहीं पाए और साथ ही सती प्रथा के समय जोर-जोर से ढोल बजाए जाते थे ताकि जलती नारी की करुण चीख-पुकार लोगों को सुनाई नहीं पड़ सके।

राजा राममोहन राय एवं महर्षि देवेंद्र नाथ टैगोर जैसे प्रबुद्ध भारतीय समाज सुधारक ने इस क्रूरबलि प्रथा पर एक महान प्रहार करना आरंभ कर दिया और इसके साथ ही सती प्रथा पर रोक लगाने की माँग प्रबल हो उठी । राजा राममोहन राय इस बात से अत्यंत दुखी थे कि विधवा स्त्रियों को अपने जीवन में कई प्रकार के कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और विधवाओं को सती होने के लिए विवश किए जाने का भी उन्होंने विरोध किया था । उन्होंने शास्त्रों का सहारा लेकर लोगों के बीच यह जागरूकता फैलाने की कोशिश की कि धर्मशास्त्रों में भी सती प्रथा का विरोध किया गया है । इस प्रथा को रोकने के लिए उन्होंने व्यक्तिगत स्तर पर भी कई प्रकार के प्रयास किए एवं तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बेंटिक को भी प्रेरित किया कि वे इस कुप्रथा को दूर करने में अपना पूर्ण समर्थन प्रदान करें ।

लॉर्ड विलियम बेंटिक को जब इस क्रूर प्रथा की अमानुषिकता का विश्वास हुआ तो उन्होंने 1829 ई के 17 वें नियम के अनुसार विधवाओं को जीवित जलाना बंद कर दिया और न्यायालय को यह निर्देश दिया गया कि ऐसे मामलों में मानव हत्या के अनुसार ही मुकदमा चलाया जाए और दोषियों को दंड दिया जाए । प्रारंभ में यह नियम केवल बंगाल के लिए था किंतु 1870 ई. में यह नियम मुंबई और मद्रास में भी

राजा राममोहन राय

जन्म - 1772 ई.
मृत्यु - 1833 ई.
कार्य - ब्रह्म समाज के संस्थापक, सती प्रथा के अंत का प्रयास, विधवा पुनर्विवाह को बल, पश्चिमी शिक्षा का प्रसार, जन जागरण और सामाजिक सुधार आंदोलन के प्रणेता, बंगाल में नवजागरण युग के जनक, भारतीय भाषाई प्रेस के प्रवर्तक तथा उनकी पत्रकारिता ने आंदोलनों को सही दिशा देने का कार्य किया।

© JCERT not to be republished

लागू कर दिया गया । इस प्रकार सती प्रथा समाप्त हो गया । इस कानून के लागू होने से स्त्रियों की स्थिति में काफी सुधार हुआ ।

राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के संबंध में अपने विचारों के प्रचार-प्रसार के लिए बहुत सारे पर्चे लिखे थे। इनमें से कुछ पर्चे किसी खास रिवाज के समर्थक और आलोचकों के बीच बहस के रूप में लिखे गये थे। सती प्रथा के बारे में इसे एक अन्य उदाहरण से समझने की कोशिश करेंगे-

सती समर्थक - औरतें कुदरती तौर पर कम समझदार बिना दृढसंकल्पवाली भरोसे के योग्य नहीं होती है। उनमें से बहुत सारी खुद ही अपने पति की मृत्यु के बाद उसके साथ जाने की कामना करने लगती हैं परंतु वे कहीं धधकती आग से न निकले इसलिए पहले हम उन्हें चिता की लकड़ियों में कस कर बाँध देते हैं।

सती विरोधी - आप लोगों ने महिलाओं को अपनी स्वाभाविक क्षमता का प्रदर्शने का सही मौका ही कब दिया? फिर भला तुम ये कैसे कह सकते हो कि उनमें समझ नहीं होती है ? अगर ज्ञान और शिक्षा के बाद भी कोई व्यक्ति न समझ सकता हो या पढ़ाई गई चीजों को ग्रहण न कर पाये तो हम उसे अक्षम मान सकते हैं, परन्तु अगर तुम औरतों को पढ़ने का मौका ही नहीं दोगे तो तुम उन्हें कमतर कैसे कह सकते हो?

© JCERT not to be republished

यह भी जानें—

- सती प्रथा का प्रथम प्रमाण 510 ई के भानुगुप्त के एरण अभिलेख से मिलता है जिसमें महाराजा भानुगुप्त के राजघराने के गोपराज की युद्ध में मृत्यु हो जाने पर उसकी पत्नी के सती होने का उल्लेख मिलता है।
- राजा राममोहन राय को 'भारतीय पुनर्जागरण का अग्रदूत' 'आधुनिक भारत का जनक' कहा जाता है ।

सही या गलत का चयन करें :

(1) हड़प्पाकालीन समाज पितृसत्तात्मक था ।

(2) सती प्रथा का प्रथम प्रमाण भानुगुप्त के एरण अभिले में मिलता है ।

(3) यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार विश्व के 80% बाल विवाह भारत में होते हैं ।

(4) 1849 ई. में सती प्रथा का अंत हुआ ।